REG. NO. RAJHIN /2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चोखी खेती

अक्टूबर 2024

सरसों की वैज्ञानिक खेती

राजेश चौधरी[1], रोशन चौधरी[2] और अमित कुमावत[3]

सरसों एवं राई की गिनती भारत की प्रमुख तीन तिलहनी फसलों (सोयाबीन, मूंगफली एवं सरसो) में होती है । राजस्थान में प्रमुख रूप से भरतपुर सवाई माधोपुर, अलवर करौली, कोटा, जयपुर आदि जिलो में सरसों की खेती की जाती है। सरसों में कम लागत लगाकर अधिक आय प्राप्त की जा सकती है। इसके हरे पौधों का प्रयोग जानवरों के हरे चारे के रूप में लिया जा सकता है। साथ ही पशु आहार के रूप में बीज, तेल, एंव खली को काम में ले सकतें हैं क्योकि इनका प्रभाव शीतल होता है जिससे यें कई रोगो की रोकथाम में सहायक सिध्द होते है इसकी खली में लगभग 4 से 9 प्रतिषत नत्रजन 2.5 प्रतिशत फॉस्फोरस एवं 1.5 प्रतिशत पोटाश होता है। अतः कई देशों में इसका उपयोग खाद की तरह किया

जाता हैं किन्तु हमारे देश में यह केवल पशुओ को खिलाई जाती है। इसके सूखे तनों को ईधन के रूप में उपयोग लिया जाता है। सरसों के बीज में तेल की मात्रा 30से 48 प्रतिषत तक पायी जाती है। सरसों राजस्थान की प्रमुख तिलहनी फसल है जिससे तेल प्राप्त होता है। सरसों का तेल बनाने मालिश करने, साबुन ,ग्रीस बनाने तथा फल एंव सब्जियों के परीरंक्षण में का आता है।

जलवायु तथा मृदा

भारत में सरसों की खेती शरद ऋतु में की जाती है। इस फसल को 18 से 25 सेल्सियस तापमान की आवष्यकता होती है। सरसों की फसल के लिए फूल आते समय वर्षा, अधिक आर्द्रता एवं वायुमण्ड़ल में बादल छायें रहना अच्छा नही रहता है। अगर इसस प्रकार का मोसम होता हें तो फसल पर माहू या चौपा के आने का अधिक प्रकोप हो जाता हैं। सरसों की खेती रेतीली से लेकर भारी मटियार मृदाओ में की जा सकती है। लेकिन बलुई दोमट मृदा सर्वाधिक उपयुक्त होती है। यह फसल हल्की क्षारीयता को सहन कर सकती है। लेकिन मृदा अम्लीय नही होनी चाहिए।

सरसों की उन्नत किस्में

आर एच 30 : सिंचित व असिचित दोनो ही स्थितीयों में गेहू, चना एवं जौ साथ खेती के लिए उपयुक्त इस किस्म के पौधों 196 सेन्टीमीटर ऊचे, एवं 5

[1],विद्या वाचस्पति छात्र, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर [2]उपनिदेशक अनुसंधान, अनुसंधान निदेशालय श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर [3]सहायक आचार्य, शस्य विज्ञान विभाग स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर *ईमेल: rajeshchoudhary6323@gmail.com

से 6 प्राथमिक शाखाओं वाले होते है। यह किस्म देर से बुवाई के लिए भी उपयुक्त है। इसमें 45 से 50 दिन में फूल आने लगते है। और फसल 130 से 135 दिन में पक जाती है। एवं इसके दाने मोटे होते है। यदि 15 से 20 अटुम्बर तक इसकी बुवाई कर दी जाये तो मोयले के प्रकोप से बचा जा सकता है।

टी 59 (वरूणा) : मध्यम कद वाली इस किस्म की पकाव अवधि 125 से 140 दिन फलिया चौडी छोटी एवं दाने मोटे काले रंग के होते है। इसकी उपज असिचित 15 से 18 दिन हेक्टर होती है। इसमें तेल की मात्रा 36 प्रतिशत होती है।

पूसा बोल्ड : मध्यम कद वाली इस किसम की शाखाओं फलियों से हुई व फलियों मोटी होती है। यह 130 स 140 दिन में पककर 20 से 25 क्विंटल हैक्टर उपज देती है। इसमें तेल की मात्रा 37से 38 प्रतिशत तक पायी जाती है।

बायो 902 (पूसा जयकिसान) : 160 से 180 से. मी. ऊँचे इस किस्म में सफेद रोली ,मुरझान व तुलासिता रोगो का प्रकोप अन्य किस्मों की अपेक्षा कम होता है। इसकी फलिया पकने पर दाने झड़ते नही एवं इसका दाना कालापन लिए भूरे रंग का होता है। इसकी उपज 18 से 20 क्विं. हेक्टर, पकाव अवधि 130 से 140 दिन एवं तेल की मात्रा 38 से 40 प्रतिशत होती है। इसके तेल में असंतृप्त वसीय अल कम होते है, इसलिए इसका तेल खाने के लिए उपयुक्त होता है।

वसुन्धरा (आर.एच. 9304) : समय पर एवं सिंचित क्षेत्र में बोई जाने वाली इस किस् का पौधा 180 से 190 से. मी. ऊँचा होता है। 130 से 135 दिन में पकने वाली इस किस्म की पैदावार 25 से 27 क्विं.। हेक्टर तक होती है। यह किस्म आड़ी गिरने तथा फली चटखने से प्रतिरोध है तथा सफेद रोली से मध्यम प्रतिरोधी है।

अरावली (आर.एन.393) : 135 से 138 दिन में पकने वाली इस किस्म की ऊँचा मध्यम होती है। तेल की मात्रा 42 प्रतिशत एवं 55 से 60 दिन में फूल आने वाली इस किस्म की औसत पैदावार 22 से 25 क्विं. हेक्टर तक होती है। यह सफेद रोली से मध्यम प्रतिरोधी है।

लक्ष्मी (आर .एच. 8812) : समय से बंवाई एवं सिचिंत क्षेत्र के लिए उपयोगी किस् अधिक ऊचाई वाली (160 से 180 से. मी.) यह किस्म 140 से 150 दिन में पककर तैयार हो जाती है। पत्तियॉ छोटी एव पतली लेकिन फली आने पर भार के कारण आड़ी पडने की सम्भावना होती है फलियॉ मोटी एवं पकने पर चटखती नी है। दाना काला तथा मोटा होता है। तेल की मात्रा 401 प्रतिशत होती है। तथा औसत पैदावार 22 से 25 क्विं. हैक्टयर होती है यह किस्म पत्ती धब्बा रोग एवं सफेद रोली से मध्यम प्रतिरोधी है।

स्वर्ण ज्योति (आर. एच. 9820) : देर से बोुई जाने एवं सिंचित क्षैत्र के लिए उपयुक्त। पौधा मध्यम ऊँचाई का (135 से 140) दिन में फूल आने वाली यह किस्म 135से 140 दिन में पककर तैयार हो जाती है तेल की मात्रा 39 से 42 प्रतिशत होती है। यह किस्म 15 नवम्बर तक बोई जाने पर भी अच्छी पैदावार देती है इसकी औसत पैदावार 13 से 15 क्वि. हैक्टयर होती है। यह आड़ी गिरने एवं फली छिटकने से प्रतिराधी, पाले के लिए मध्यम सहनषील एवं सफेद रोली से मध्य प्रतिरोधी है।

आषीर्वाद : यह किस्म देरी से बुवाई के लिए (25 अक्टुबर से 15 नवम्बर तक) उपयुक्त पायी गई है। इसका पौधा 130 से 140 से. मी. ऊँचा होता है। तेल की मात्रा 39 से 42 प्रतिशत होती है। यह किस्म आड़ी गिरने एवं फली छिटकने से प्रतिरोधी पाले से मध्यम प्रतिरोधी 120 से 130 दिन में पककर 13 से 15 क्विं. हैक्टयर उपज देती है

खेत की तैयारी

सरसों के लिए भुरभुरी मृदा की आवष्यकता होती है। इसे लिए खरीफ की कटाई के बाद एक गहरी जुताई करनी चाहिए तथा इसके बाद तीन चार बाार देषी हल से जुताई करना लाभप्रद होता है। जुताई के बाद पाटा लगाकर खेत को तेयार करना खहिए असिंचित क्षैत्रों में वर्षा के पहले जुताई करके खरीफ मौसम में खेत पड़ती छोडना चाहिए जिससे वर्षा का पानी का संरक्षण हो सके । जिसके बाद

हल्की जुताइयॉ करके खेत तैयार करना चाहिए । यदि खेत में दीमक एवं अन्य कीटो का प्रकोप अधिक हो तो, नियंत्रण हेतु अन्तिम जुताई के समय क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हेक्टयर की दर ससे देना चाहिए। साथ ही, उत्पादन बढ़ाने हेतु 2 से 3 किलरग्राम एजोटोबेक्टा एवं पी.ए.बी कल्चर की 50 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद या वर्मीकल्चर में मिलाकर अंतिम जुर्ता से पुर्ण खेत में ड़ालना चाहिए।

सरसों की बुवाई

सरसों की बुवाई के लियें उपयुक्त तापमान 25 से 26 सैल्सियस तक रहता है। बारानी में सरसों की बुवाई 15 सितम्बर से 15 अक्टुबंर तक कर देनी चाहिए। सिंचित क्षैत्रो में अक्टूबर के अन्त तक बंवाई की जा ससकती हैं सरसों की बुवाई कतारो में करनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 30 सें. मी. तथा पौधों से पौधें की दूरी 10 सें. मी. रखनी चाहिए। सिंचित क्षैत्र में बीज की गहराई 5 से. मी. तक रखी जाती है। असिचित क्षैत्र में गहराइ नमी के अनुसार रखनी चाहिए। बुंवाई के लिए शुष्क क्षैत्र में 4 से 5 कि.ग्रा तथा सिंचित क्षैत्र में 2.5 कि. ग्रा बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त रहता है। बुवाइे से पहले बीज को 2.5 ग्राम मैन्कोजेब प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

खाद व उर्वरक प्रबन्धन

सिंचित फसल के लिए 8से10 टन सड़ी गोबर की खाद प्रति हेक्टर की दर से बुवाई के 3से 4 सप्ताह पुर्व खेत मे डालकर खेत की तैयारी करें एवं बारानी क्षत्र में वर्षा` पुर्व 4से5 टन सडी खाद प्रति हैक्टर खेत में डाल देवें। एक दो वर्षा के बाद खेत में समान रूप से फैलाकर जुताई करे। सिंचित क्षैत्रों में 80 कि.ग्रा. नत्रजन 30से40 किग्रा फॉस्फोरस एवं 375 किग्रा. जिप्सम या 60 किग्रा गन्धक पुर्ण प्रति हैक्टर की दर से डालें। नत्रजनकी आधी व फॉस्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय देवे,षेष आधी मात्रा प्रथम सिचाई के समय देवे।

सिंचाई

सरसों की फसल में सही समय पर सिंचाई देने पर पैदावार में बढोत्तरी होती है। यदि वर्षा अधिक होती है। तो फससल को सिचाई की आवश्यकता नही होती है। परन्तु यदि वर्षा समय पर न होतो 2 सिंचाई आवश्यक है प्रथम सिंचाई बांई के 30 से 40 कदन बाद एवं दितीय सिचाइ 70 सें 80 दिन की अवथा में करे । यदि जल की कमी हो तो एक सिचाई 40से50 दिन की फसल में करें।

निराई गुडाई एवं खरपतवार नियन्त्रण

पौधों की संख्या अधिक होतो बुवाई के 20 से 25 दिन बाद निराई के साथ छटाई कर पौधें निकालने चाहिए तथा पौधों के बीच 8 से 10 सेन्टी मीटर की दूर रखनी चाहिए। सिचाई के बाद गुडाई करने से खरपतवार अच्छी होगी। प्याजी की रोकथाम के लियें फ्लूम्लोरेलिन एक लीटर सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर भूमि में मिलावें। जहा पलेना करके बुवाई की जानी हो वहों सूखी बुवाई की स्थिति में पहलें फसल की बुवाई करे इसकें बाद फ्लूम्लोरेलिन का छिड़काव कर सिचाई करनी चाहिए।

फसल की कटाई

सरसों की फल 120से150 दिन में पककर तैयार हो जाती है इस फसल में उचित समय पर कटाई करना अत्यन्त आवष्यक है क्यो कि यदि समय पर कटाई नहीं की जाती है। तो फलियाँ चटकने लगती है। एवं उपज में 5 से 10 प्रतिषत की कमी आ जाती है। जैंसे ही पौधे की पत्तियों एवं फलियों का रंग पीला पड़ने लगें कटाई क लेनी चाहिए। कटाई के समय इस बात का विषष ध्यान रखे की सत्यानाशी खरपतवार का बीज, फल के साथ न मिलने पाये नही तों इस फसल के दूषित तेल से मनुष्य में ड्रोपसी नामक बीमारी हो जायेगी।

उत्पादन : सरसों की उपरोक्त उन्नत तकनीक द्वारा खेती करने पर असिंचित क्षेत्रो में 15 से 20 क्विंटल तथा सिंचित क्षेत्रो में 20 से 30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर दाने की उपज प्राप्त हो जाती है।उपज प्राप्त हो जाती है।

वैज्ञानिक तरीके से ब्रोकली की खेती

ममता[1] एवं डॉ. रोशन चौधरी[2]

ब्रोकली एक प्रमुख सब्जी है, जो की गोभीय वर्गीय सब्जियों के अंतर्गत आती हैं। ब्रोकोली दिखने में फूलगोभी की तरह ही दिखाई देती है लेकिन इसमें पोष्टिकता फूलगोभी से ज्यादा होती है। यह एक पौष्टिक इटालियन गोभी है। जिसे मूलतः सलाद, सूप, व सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है। ब्रोकोली को हरी गोभी भी कहा जाता हे ब्रोकोली में गोभी से अधिक भाव और अधिक फूल प्राप्त होते हे गोभी के पौधे पर एक ही फूल प्राप्त होता हे लेकिन ब्रोकोली के एक ही पौधे से 4 से 5 फूल प्राप्त होते हैं। भारत में इसकी खेती ज्यादातर उत्तर भारत में की जाती है।

ब्रोकली में पाए जाने वाले औषधीय गुण

ब्रोकली हरी सब्जी के रूप में लोहा, प्रोटीन, कैल्शियम, कार्बोहाइड्रेट, क्रोमियम, विटामिन ए और सी पाया जाता है, जो सब्जी को पौष्टिक बनाता है। इसके अलावा इसमें फाइटोकेमिकल्स और एंटी–ऑक्सीडेंट भी होता है, जो बीमारी और बॉडी इंफेक्शन से लडने में सहायक होता है। ब्रोकोली विटामिन सी से भरी हुई है। यह कई पोषक तत्वों से भरपूर है। यह कई बीमारियों से बचाने के साथ ब्रेस्ट कैंसर और प्रोस्टेट कैंसर के भी खतरे को कम करती है।

बुवाई का समय

ब्रोकोली की खेती के लिए नर्सरी तैयार करने का समय अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा होता है, पर्वतीय क्षेत्रों में कम उंचाई वाले क्षेत्रों में सितम्बर–अक्टूम्बर, मध्यम उंचाई वाले क्षेत्रों में अगस्त, सितम्बर, और अधिक उंचाई वाले क्षेत्रों में मार्च–अप्रैल में तैयार की जाती हैं।

दुरी

बीज को पंक्तियों में 4–5 से.मी. की दूरी पर बोना चाहिए। गहराई बीजों की 2.5 से.मी. की गहराई पर बुवाई करना चाहिए।

बुवाई का तरीका

ब्रोकोली की बुवाई बीजों द्वारा नर्सरी में इसकी पौध प्रो–ट्रे और क्यारियों में तैयार की जाती है, और उसके बाद खेत में रोपण किया जाता है। नर्सरी की तैयारी में इस बात का ध्यान रखें की नर्सरी जमीन से 15 सेमी. ऊंची हुई हो।

बीज की मात्रा

ब्रोकोली की नर्सरी में बुवाई के लिए 400–500 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर (8–10 ग्राम प्रति नाली) पर्याप्त होता है।

बीज उपचार

ब्रोकली की पौध तैयार करने के दौरान बीज को उपचारित कर नर्सरी में लगाना चाहिए। बीज को उपचारित करने के लिए थीरम या कैप्टन दवा की उचित मात्रा का इस्तेमाल करना चाहिए।

अनुकूल जलवायु

ब्रोकली की फसल के लिए ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है यदि दिन अपेक्षाकृत छोटे हों तो फूल की बढ़ोत्तरी अधिक होती है फूल तैयार होने के समय तापमान अधिक होने से फूल छितरेदार ,पत्तेदार और पीले हो जाते हैं। भारत में इसे रबी की फसल के साथ उगाया जाता है।

भूमि का चयन

ब्रोकली फसल की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है, लेकिन सफल खेती के लिये उत्तम जलनिकास वाली बलुई दोमट मिट्टी बहुत उपयुक्त है। जिसमें पर्याप्त मात्रा में जैविक खाद हो इसकी खेती के लिए अच्छी होती है। हल्की रचना वाली भूमि में पर्याप्त मात्रा में जैविक खाद डालकर इसकी खेती की जा सकती है। ब्रोकली की खेती के लिए मिट्टी का पीएच 5.0–6.5 होना

[1]विद्यावाचस्पति, शस्य विज्ञान विभाग राजस्थान कृषि महाविद्यालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,उदयपुर 3130012 [2]उपनिदेशक अनुसंधान, अनुसंधान निदेशालय शस्य विज्ञान विभाग श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर
ईमेल **Mamta442255@gmail-com**

चाहिऐ।

इसके अलावा पहाड़ी क्षेत्रों में ब्रोकली की खेती गर्मियों के मौसम में भी आसानी से की जा सकती है। इसके पौधों को अधिक वर्षा की आवश्यकता नहीं होती है। ब्रोकली के पौधे 20 से 25 डिग्री के तापमान पर अच्छे से अंकुरित हो जाते है, तथा 20 डिग्री तापमान में इसके पौधे अच्छे से विकास करते है

खेत की तैयारी

पौधरोपण से पहले खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल या हैरो से करनी चाहिए। इसके बाद 2 से 3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। अंतिम जुताई करने से पहले खेत में 10 से 15 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की सड़ी हुई खाद डाल कर मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिए। इसके बाद पाटा लगाकर खेत को ढेले रहित व समतल बना लेना चाहिए।

ब्रोकली की उन्नत किस्में

नाइन स्टार

इस किस्म के पौधों को तैयार होने के लिए अधिक ठण्ड की आवश्यकता होती है। इसका फल दो से तीन फीट तक लम्बा होता है, जिसमे निकलने वाले फलो का रंग हल्का सफेद होता है। इसके पौधों को कलम और बीज के द्वारा ऊगा सकते है। यह किस्म प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 100 से 120 क्विंटल का उत्पादन दे देती है।

इटालियन ग्रीन स्प्राउटिंग

यह ब्रोकली की एक विदेशी किस्म है, जिसे भारत में बहुत कम उगाया जाता है। इसके पौधों में निकलने वाले फल बिल्कुल गोभी की तरह होते है, किन्तु इनका रंग हरा होता है। यह किस्म प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 100 क्विंटल की पैदावार दे देती है।

ग्रीन स्प्राउटिंग

ब्रोकली की यह किस्म 80 से 90 दिन में पैदावार देने के लिए तैयार हो जाती है। इसके पौधों में लगने वाले फल का सिरा गुंथा हुआ और गहरा हरा होता है। यह किस्म प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 120 से 150 क्विंटल की पैदावार दे देती है।

ब्रोकली संकर –1

ब्रोकली की यह किस्म कम समय में अधिक पैदावार देने के लिए उगाई जाती है। इसकी फसल पौध रोपाई के 60 से 65 दिन बाद तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती है। इसमें निकलने वाला फल रंग में हरा और गठीला होता है। जिसका प्रति हेक्टेयर उत्पादन 100 क्विंटल के आसपास होता है

इसके अतिरिक्त भी ब्रोकली की कई उन्नत किस्मों को अलग–अलग जलवायु में अधिक पैदावार के लिए तैयार किया गया है, जो कि इस प्रकार है– पंजाब ब्रोकली, के टी एस 9, पालक समृद्धि, पेरिनियल, क्रुसेर, प्रिमिय क्राप, स्टिक, बाथम 29, ग्रीन हेड, केलेब्रस, पाईरेट पेकमे और क्लीपर आदि

खाद एवं रासायनिक उर्वरक

उर्वरको का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना उपयुक्त रहता है।अच्छी उपज के लिए खेत तैयार करते समय प्रति हैक्टेयर 15–20 टन गोबर की खाद कम्पोस्ट खाद, 100 किलोग्राम नाइट्रोजन, 100 किलोग्राम फास्फोरस तथा 50 किलोग्राम पोटाश का प्रयोग किया जाना अनुकूल होता है।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार की रोकथाम के लिए आवश्यकतानुसार समय–समय पर निराई–गुड़ाई करना चाहिए।

सिंचाई

ब्रोकोली के पौधों को पानी की सामान्य जरूरत होती है। लेकिन पौध को खेत में लगाने के तुरंत बाद उनकी सिंचाई कर देनी चाहिए। उसके बाद इसके पौधों को आवश्यकता के आधार पर 10 से 15 दिन के अंतराल में पानी देते रहना चाहिए। इसके पौधे को पककर तैयार होने के लिए लगभग 5 से 6 सिंचाई की ही जरूरत होती है।

फसल की कटाई

ब्रोकोली की फसल की कटाई के लिए पौधरोपण के 65–70 दिन बाद तैयार हो जाते हैं, ब्रोकली का फूल जब गठा हुआ, हरा व उचित आकार का हो तभी डंठल सहित तोडना चाहिये। तुड़ाई करने में विलम्ब होने से शीर्ष (फूल) में पीलापन तथा स्वाद में विपरीत प्रभाव पड़ता है।

ब्रोकली के पौधों में लगने वाले रोग एवं उनकी रोकथाम

आर्द्रपतन रोग

यह एक मृदा जनित रोग है, जो पौधों पर आर्द्रपतन के रूप में लगता है। इस रोग से प्रभावित होने पर पौधे की पत्तिया पीली पड़ने लगती है, जिसके बाद पौधा भूमि सतह के पास से गलकर खराब हो जाता है। यह रोग अक्सर खेत में जलभराव की स्थिति में देखने को मिलता है। खेत में उचित जल निकासी की व्यवस्था कर इस रोग से पौधों को बचाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त बीजो को खेत में लगाने से पहले उन्हें ट्राइकोडर्मा विरिडी की उचित मात्रा से उपचारित कर रोपाई करनी चाहिए। इसके अलावा कार्बेन्डाजिम की उचित मात्रा का छिड़काव पौधों पर किया जाता है।

तना छेदक रोग

इस किस्म का रोग पौधों के विकास के समय देखने को मिलता है। इस रोग की सुंडी पौधों की पत्तियों को खाकर उन्हें नष्ट कर देती है। रोग का अधिक प्रभाव बढ़ने पर पौधों के तनो पर गोल आकार का छेद दिखाई देने लगता है, जिससे पौधा ठीक से वृद्धि नहीं कर पाता है। इस रोग की रोकथाम के लिए ब्रोकली के पौधों पर नीम के तेल या काढ़े का छिड़काव किया जाता है। इसके अलावा एण्डोसल्फान या क्विनालफॉस की उचित मात्रा का छिड़काव पौधों पर करना चाहिए।

चेपा कीट रोग

यह कीट रोग पौधों पर समूह के रूप में आक्रमण करता है। चेपा कीट रोग पौधों के नाजुक अंगो को हानि पहुँचता है। यह कीट रोग आकार में अधिक छोटे और देखने में पीले, हरे और काले रंग के होते है। इस किस्म का रोग अक्सर अधिक गर्मी के मौसम में देखने को मिलता है। मेलाथियान या एण्डोसल्फान की उचित मात्रा का छिड़काव कर इस रोग की रोकथाम की जा सकती है।

ब्रोकली के फलो की कटाई पैदावार और लाभ

ब्रोकली के पौधे रोपाई के 60 से 80 दिन बाद पैदावार देने के लिए तैयार हो जाते है। जब इसके पौधों पर लगे फलो का मुख्य सिरा बनकर तैयार हो जाता है, उस दौरान इसकी कटाई कर ली जाती है। ब्रोकली के फलो की कटाई 10 से 12 दिन की डंठल के साथ करनी चाहिए। इससे फल अधिक समय तक संरक्षित किया जा सकता है। फलो की पहली कटाई के बाद पौधों पर दूसरी शाखाएँ निकलने लगती है, जिसके बाद उन पर फिर से फल निकल आते है, किन्तु यह फल आकार में कुछ छोटे होते है।

एक हेक्टेयर के खेत में तकरीबन 80 से 100 क्विंटल की पैदावार प्राप्त हो जाती है। ब्रोकली का बाजारी भाव 30 रूपए से 50 रूपए प्रति किलो होता है। जिससे किसान भाई ब्रोकली की एक बार की फसल से 3 से 5 लाख तक की कमाई कर अधिक लाभ कमा सकते है।

भंडारण

ब्रोकली को तुड़ाई के बाद बाजार में बिकने तक उचित रखरखाव की आवश्यकता होती है। अन्यथा ब्रोकली खराब होने लगती है। इसके लिये या तो ब्रोकली को बर्फ के साथ पैकिंग करें या ठंडे कमरे में रखें अथवा ठंडे पानी का छिड़काव करें। उचित रखरखाव करें इसमें ब्रोकली खराब नहीं होगी तथा बाजार पहुंचने तक ताजी एवं गुणकारी रहेगी।

पत्रिका में प्रकाशित आलेख/ विचार लेखकों के अपने हैं।

सरसों (राई) के फायदे, उपयोग और नुकसान

डॉ. अनिता, डॉ. मनोहर राम एवं डॉ. दीपक गुप्ता

सरसों क्या है?

सरसों क्रूसिफेरा या ब्रैसिकेसी परिवार का एक पौधा है, जो आकार में लगभग 1 से लेकर 3 फुट तक लंबा हो सकता है। इसे ब्रेसिका कैंपेस्ट्रिस वैज्ञानिक नाम से जाना जाता है। इसकी पत्तियों का उपयोग साग बनाने के लिए, जबकि फूल और बीजों का उपयोग तेल निकालने के लिए किया जाता है। इसके अलावा, सरसों के बीज का उपयोग मसाले के रूप में भी किया जाता है।

सरसों के प्रकार –

सरसों के मुख्य रूप से तीन प्रकार होते हैं, काली सरसों, पीली सरसों और भूरी सरसों। इसके अलावा, सरसों से ही मिलती–जुलती राई होती है। राई के दाने सरसों के दाने से आकार में थोड़े छोटे होते हैं। साथ ही स्वाद भी दोनों का अलग होता है। जहां, सरसों के दाने का तेल निकाला जाता है, वहीं राई के दाने आचार में डाले जाते हैं। वहीं, गुणों की बात करें, तो दोनों में ही लगभग एक समान गुण और पोषक तत्व पाए जाते हैं। साथ ही अंग्रेजी में दोनों को मस्टर्ड कहा जाता है।

सरसों के औषधीय गुण –

सरसों हमारी सेहत के लिए कई प्रकार से फायदेमंद हो सकती है। सरसो के बीजो में कैलोरी, प्रोटीन, फैट, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम, फास्फोरस, पोटैशियम, विटामिन सी, फोलेट, विटामिन–ए, विटामिन–ई, विटामिन–के इत्यादि प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। इसमें कैरोटीनॉयड, फेनोलिक कंपाउंड्स और ग्लूकोसिनोलेट्स जैसे कई प्रकार के फाइटोकेमिकल्स पाए जाते हैं। इन फाइटोकेमिकल्स की मदद से कैंसर, मधुमेह और हृदय रोग जैसी बीमारियों से बचना आसान होता है। इसमें पाए जाने वाले औषधीय गुण सेहत के लिए अन्य प्रकार से भी फायदेमंद हो सकते हैं, जिनके बारे में आगे विस्तार से बताया गया है।

सरसों के फायदे –

1 कैंसर की रोकथाम में सरसों के बीज के फायदे –

सरसों में कुछ ऐसे गुण पाए जाते हैं, जो कैंसर को पनपने से रोक सकते हैं। एनसीबीआई की वेबसाइट पर प्रकाशित शोध में पाया गया कि सरसों में एंटीकार्सिनोजेनिक गुण पाया जाता है। सरसों में पाया जाने वाला यह गुण शरीर में कैंसर को पनपने से रोक सकता है। इसके अलावा, एक अन्य शोध में पाया गया है कि सरसों के तेल में मौजूद ओमेगा–3 पॉलीअनसैचुरेटेड फैटी एसिड कोलन कैंसर के खतरे को रोकने में प्रभावी असर दिखा सकते हैं। बेशक, वैज्ञानिक अध्ययन पुष्टि करते हैं कि सरसों में एंटी कैंसर गुण पाए जाते हैं, लेकिन ये कैंसर का इलाज नहीं हो सकते हैं। इसलिए, अगर कोई इस गंभीर बीमारी से पीड़ित है, तो उसे डॉक्टर से उचित इलाज करवाना चाहिए।

2 अस्थमा की अवस्था में सरसों के लाभ –

सरसों में मौजूद औषधीय गुण अस्थमा में लाभकारी हो सकते हैं। एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार, सरसों के बीज में साइनपाइन नामक कार्बनिक यौगिक पाया जाता है। यह मांसपेशियों की सक्रियता और फेफड़ों की कार्यक्षमता को बढ़ाकर अस्थमा की स्थिति के विपरीत क्रिया उत्पन्न कर अस्थमा को रोकने में मदद कर सकता है।

3 माइग्रेन को दूर करने में सरसों के बीज के फायदे –

माइग्रेन की समस्या के कारण, पीड़ित व्यक्ति सिर में असहनीय दर्द से जूझता है। इस समस्या को दूर करने के लिए सरसों का उपयोग फायदेमंद हो सकता है। एक वैज्ञानिक रिपोर्ट के अनुसार, सरसों के बीज में राइबोफ्लेविनन नामक विटामिन मौजूद होता है, जो माइग्रेन के खतरे को कम कर सकता है।

4 रक्तचाप के लिए सरसों के बीज के स्वास्थ्य लाभ –

रक्तचाप को नियंत्रित रखने के लिए भी सरसों का उपयोग किया जा सकता है। एक शोध में पाया गया कि सरसों के बीज में मेथनॉल अर्क पाया जाता है, जिसमें एंटीहाइपरटेंशन प्रभाव होता है। इसलिए, अगर सीमित मात्रा में सरसों के बीज या फिर राई के बीज का सेवन किया जाता है, तो रक्तचाप को नियंत्रित रखा जा सकता है।

5 वजन कम करने के लिए सरसों के

आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, जयपुर, राजस्थान, 303329
*akhedar1993@gmail.com

फायदे –

बढ़ता हुआ वजन कई गंभीर बीमारियों का कारण बन सकता है और सरसों के बीज के फायदे वजन घटाने में भी देखे जा सकते हैं। एनसीबीआई की वेबसाइट पर प्रकाशित किया गया है। रिसर्च के अनुसार, सरसों के बीज से निकाला गया तेल वजन घटाने में सहायक हो सकता है। दरअसल, सरसों के तेल में डायसेलिग्लिसरॉल की प्रचुर मात्रा पाई जाती है, जो वजन घटाने में सहायक हो सकता है। वहीं, डॉक्टरों का कहना है कि सरसों के बीज या राई पाचन क्रिया में मदद करते हैं और मेटाबॉलिज्म को बढ़ावा देते है, जिससे वजन कम होने में मदद मिल सकती है।

6 कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित करने में सरसों के बीज के स्वास्थ्य लाभ –

सरसों बेनिफिट्स की बात करें, तो कोलेस्ट्रॉल के नियंत्रण में भी इसके लाभदायक परिणाम देखने को मिल सकते हैं। एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार, डायसेलिग्लिसरॉल से समृद्ध सरसों में कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित करने की क्षमता पाई जाती है। इसके सेवन के बाद यह देखा गया है कि हाई डेंसिटी लिपोप्रोटीन (एचडीएल) यानी अच्छे कोलेस्ट्रॉल में वृद्धि हुई और लो डेंसिटी लिपोप्रोटीन (एलडीएल) यानी खराब कोलेस्ट्रॉल में कमी आई। इसलिए, कोलेस्ट्रॉल के संतुलन में सरसों के तेल का प्रयोग किया जा सकता है ।

7 मधुमेह से बचने में सरसों के बीज के लाभ –

रक्त में ग्लूकोज का स्तर बढ़ने और अनियंत्रित होने से मधुमेह की समस्या हो सकती है। मधुमेह की समस्या से बचने के लिए सरसों मददगार हो सकता है। इस विषय पर कई वैज्ञानिक शोध भी हो चुके हैं। दरअसल, शोध में पाया गया है कि काले सरसों के बीज में हाइपोग्लाइसेमिक और एंटीडायबिटिक गुण पाए जाते हैं, जो रक्त में मौजूद ग्लूकोज के स्तर को कम करने में मदद कर सकते हैं। काले सरसों के बीज डायबिटीज की समस्या में आराम पहुंचाने का काम कर सकते हैं।

8 रुमेटाइड अर्थराइटिस में लाभदायक –

रुमेटाइड अर्थराइटिस ऐसी बीमारी है, जिसमें पैरों की गांठ में सूजन की समस्या के साथ–साथ दर्द भी हो सकता है। यहां सरसों तेल के फायदे देखे जा सकते हैं। एनसीबीआई की वेबसाइट पर प्रकाशित एक वैज्ञानिक शोध के अनुसार, सरसों के तेल में ओमेगा–3 फैटी एसिड होता है, जो रुमेटाइड अर्थराइटिस में आराम पहुंचाने का काम कर सकता है। यह अर्थराइटिस के कारण होने वाले दर्द और जोड़ों में सूजन को कुछ हद तक कम कर सकता है।

9 रतौंधी की समस्या को दूर करने के लिए सरसों का उपयोग –

विटामिन ए की कमी से रात को नहीं दिखाई देना या फिर नजर का कमजोर होना यानी रतौधीं की समस्या हो सकती है। सरसों का उपयोग करने पर इस समस्या को दूर किया जा सकता है। एनसीबीआई की वेबसाइट पर प्रकाशित शोध के अनुसार, पीली सरसों में विटामिन–ए की अच्छी मात्रा पाई जाती है। विटामिन–ए रतौंधी की समस्या को कुछ हद तक कम करने में मदद कर सकता है। बेशक, रतौंधी में सरसों से फायदा हो सकता है।

10 फाइबर से भरपूर –

अन्य पोषक तत्वों के साथ फाइबर भी शरीर के लिए जरूरी माना जाता है। यह कब्ज जैसी पेट संबंधी समस्याओं से छुटकारा दिलाने के साथ–साथ वजन को नियंत्रित करने का काम भी करता है। इस खास पोषक तत्व की पूर्ति के लिए सरसों का सेवन किया जा सकता है, क्योंकि सरसों फाइबर का अच्छा स्रोत है।

11 बुखार और सर्दी में सरसों खाने के फायदे –

बुखार और सर्दी में भी सरसों के फायदे देखे गए हैं। माना जाता है कि अगर पीले बुखार से ग्रस्त मरीज के पैरों को गर्म पानी में सरसों मिलाकर धोया जाए, तो आराम मिल सकता है। इसके अलावा, एक और अन्य शोध से यह पता चला है कि सरसों में मौजूद गुणों के कारण इसका इस्तेमाल सर्दी, जुकाम और फ्लू के खिलाफ किया जा सकता है।

12 पीठ दर्द और मांसपेशियों के दर्द में –

सरसों का उपयोग मलहम और दर्द निवारक के रूप में आज भी गठिया की समस्या के साथ ही पीठ दर्द और मांसपेशियों में दर्द के इलाज के लिए किया जाता है। इसके अलावा, ठंड के दिनों में सरसों तेल को गुनगुना करके शरीर पर इसकी मालिश करने से लाभ हो सकता है।

13 संक्रामक रोगों से लड़ने में सरसों के लाभ –

सरसों या राई के फायदे संक्रमण से लड़ने में भी काम आ सकते हैं। एक शोध में पाया गया कि सरसों का उपयोग आरटीआई (रेस्पिरेटरी ट्रैक्ट इंफेक्शन) यानी श्वसन तंत्र की समस्या को कम

करने में फायदेमंद हो सकता है। शोध में मरीजों के पैरों को दिन में एक बार सरसों के बीज के फुटबाथ किया गया, जिससे उन्हें जल्दी ही आराम मिला। इसके लिए एक बाल्टी गर्म पानी में सरसों के बीज से बने पाउडर को मिक्स करके मरीज को उसमें पैर डालकर रखने को कहें।

14 त्वचा के लिए सरसों के फायदे–

एजिंग की समस्या से रोकथाम के लिए भी सरसों के फायदे देखे जा सकते हैं। सरसों में विटामिन–सी (एस्कॉर्बिक एसिड) होता है। एस्कॉर्बिक एसिड को विभिन्न सौंदर्य उत्पादों में प्रयोग किया जाता है। इन उत्पाद में एंटी–एजिंग उत्पाद भी शामिल हैं, जो बढ़ती उम्र के साथ होने वाली एजिंग की समस्या से बचाने का काम कर सकते हैं।

15 बालों के विकास के लिए सरसों के गुण–

बालों में सरसों के तेल का इस्तेमाल सदियों से किया जा रहा है। सरसों के तेल में विटामिन, प्रोटीन और फैटीसेड की मात्रा पाई जाती है। एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार, इन सभी पोषक तत्व में ऐसे गुण पाए जाते हैं, जो बालों के विकास और बालों का गिरना कम करने में सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं।

सरसों का उपयोग

सरसों में मौजूद पौष्टिक तत्व सरसों के बीज के लाभ और इसके उपयोग को लाभकारी बना सकते हैं। आप सरसों का उपयोग निम्न तरीकों से कर सकते हैं।

- ✓ सरसों के तेल की कुछ बूंदों को सलाद में इस्तेमाल कर सकते हैं।
- ✓ भुने हुए चने के साथ भी सरसों का इस्तेमाल कर सकते हैं।
- ✓ सरसों को दाल या सब्जी में छौंका लगाने के लिए भी इस्तेमाल कर सकते हैं।
- ✓ इसके अलावा, सरसों के तेल को पकौड़ी व पापड़ आदि तलने के लिए भी इस्तेमाल किया जाता है।
- ✓ त्वचा पर कहीं कोई लालिमा है, तो इसे प्रभावित जगह पर लगा सकते हैं।
- ✓ बालों में लगाने के लिए भी आप सरसों तेल का इस्तेमाल कर सकते हैं।
- ✓ शरीर में मालिश के लिए भी सरसों के तेल का इस्तेमाल किया जा सकता है।

सरसों को लंबे समय तक सुरक्षित कैसे रखें?

सरसों का तेल या राई के बीज आवश्यकतानुसार मात्रा में ही खरीदें। अगर तेल और बीज को अच्छी तरह स्टोर किया जाए, तो इसे लंबे समय तक इस्तेमाल किया जा सकता है। तेल व बीज को हमेशा एयरटाइट कंटेनर और घर के सामान्य तापमान में ही रखें।

सरसों के नुकसान

सरसों को अगर सीमित मात्रा में प्रयोग किया जाए, तो सरसों खाने के फायदे अनेक हैं। वहीं, अगर वैज्ञानिक तथ्यों को नजरअंदाज कर सरसों का इस्तेमाल किया जाए, तो स्वास्थ्य के लिए सरसों के बीज के नुकसान हो सकते हैं। सरसों के दाने या राई के नुकसान इस प्रकार हैं।

- ✓ तलने के लिए इस्तेमाल किए गए तेल को दोबारा प्रयोग में न लाएं, इससे लंग कैंसर का खतरा हो सकता है। इसमें सरसों का तेल भी शामिल है।
- ✓ सरसों को अधिक समय तक त्वचा पर लगाने से जलन की समस्या भी हो सकती है ।
- ✓ विटामिन ई के सप्लीमेंट के अधिक सेवन से दिमाग में ज्यादा खून बहने का खतरा भी हो सकता है। वहीं, सरसों के बीज में विटामिन–ई की भरपूर मात्रा होती है। ऐसे तो भोजन के माध्यम से मिलने वाला विटामिन ई कोई विपरीत प्रभाव नहीं डाल सकता है, लेकिन फिर भी सावधानी के तौर पर इसका सेवन संतुलित मात्रा में ही करें।
- ✓ सरसों के तेल में इरुसिक एसिड की मात्रा मौजूद होती है, जिसका अधिक सेवन लिपोसिस की समस्या उत्पन्न कर देता है, जो हृदय रोगों का मुख्य कारण बन सकता है। इस कारण अधिक मात्रा सरसों के तेल का सेवन करना सुरक्षित नहीं है।
- ✓ जानवरों पर किए गए कई प्रयोगों में यह साबित हुआ है कि सरसों का अधिक मात्रा में उपयोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने के स्थान पर कम कर सकता है

लेहसुआ: एक गुणकारी औषधीय फल

विनीता राजपूत, सुनील कुमार, नरेन्द्र कुमार

लेहसुआ भारत के शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्रों में पाया जाने वाला फलवृक्ष है। इसे लसोड़ा, इंडियन चेरी व गोंडा नामों से भी जाना जाता है। इसके पेड़ अधिकांश जंगलों में मिलते हैं परंतु इसके औषधीय गुणों की वजह से आजकल इसकी खेती वैज्ञानिक विधि से भी की जाने लगी है। यह फल कई प्रकार की भौगोलिक स्तिथियों में उगाया जा सकता है और इसकी प्रति एकड़ उत्पादन क्षमता भी अधिक है। लेहसुआ को बारानी जमीन, घर के बगीचों, सड़कों या फार्म के किनारे भी उगाया जा सकता है। लेहसुआ के लगभग सभी भाग प्रयोग में लाए जा सकते हैं। इसके पके हुए फल को सीधा और कच्चे फलों को आचार बना कर या सुखाकर खाया जाता है। पेड़ों की मूसला जड़, मोटी पत्तियां, छोटे व गहरे स्टोमेटा, सूखे के समय पत्ते गिरा देने की प्रवर्त्ति, मिट्टी में पानी को रोकने की क्षमता, मिट्टी में लवाणीयता को सहने की क्षमता इस पेड़ को शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्रों का एक महत्वपूर्ण वृक्ष बनाती है। लेहसुआ की सबसे अधिक जैवविविधता उत्तर–पश्चिम भारत में पायी जाती है।

इसके फलों में कार्बोहाइड्रेट, एंटीऑक्सीडेंट्स, व एस्कॉर्बिक ऐसिड प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। यह मानव स्वास्थ्य के लिए आवश्यक पोषक तत्वों (कैल्शियम, फॉसफ़ोरस, जिंक) रेशे और विटामिन का मुख्य स्त्रोत हैं। इसके फलों का प्रयोग दर्द निवारक, जीवाणुरोधी दवाएं बनाने, हृदय व श्वास संबंधित रोगों के इलाज में, कीटनाशक, जीवाणुनाशक की तरह किया जाता है। लेहसुआ खांसी, सांस की नली के संक्रमण, व गले में होने वाले छालों के इलाज के लिए प्रयोग में लाया जाता है। फलों के गूदे को आराम के लिए फोड़े–फुंसियों व दाद पर लगाया जाता है। आंतों व आमाशय के दर्द को खत्म करने और पेट के कीड़ों से निजात पाने लिए गूदे को खाया जाता है। लसोड़े की पत्तियों को पीसकर पीने से परजीवीजनित बीमारियों में आराम मिलता है। पेड़ की छाल को पीसकर चोट वाली जगह पर लगाने से चोट और स्किन में होने वाले संक्रमण जल्दी ठीक होते हैं।

लेहसुआ के औषधीय गुणों को भलि–भांति जानने के बाद भी, व्यवसायिक तौरपर इसके उत्पादन को बढ़ावा नहीं मिल पा रहा है। लोगों की मांग के अनुसार किस्मों की उपलब्धता व प्रसंस्कृत उत्पाद न होना इसका एक बहुत बड़ा कारण है। इसके लिए आवश्यक है कि प्रकृति में ज्यादा से ज्यादा इसकी किस्मों को एकत्रित कर उन्हें मांग के अनुसार विकसित किया जाए और किसानों तक पहुंचाया जाए।

सालों के शोध के बाद कृषि अनुसंधान संस्थानों द्वारा लसोड़े की उन्नत किस्मों को विकसित किया गया जिसमे केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (जोधपुर) से विकसित किस्म 'मरु समृद्धि', केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान से विकसित किस्म 'थार बोल्ड', सी.आई.ए.एच. सिलेक्शन–2 व श्री केशवानंद कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर से विकसित किस्म 'करण लसोड़ा' शामिल हैं। लेहसुआ पर शोध के लिए कई कृषि विश्वविद्यालयों व संस्थानों द्वारा निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं।

जिला विस्तार विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केंद्र, सिरसा
चौधरी चरण सिंह, हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

प्राकृतिक खेती की अवधारणा

प्रतीक्षा गौड़[1], इंजी. जितेन्द्र गौड़[2]

प्राचीन भारत अपनी परम्परागत कृषि पद्धतियों से खाद्यान आपूर्ति हेतु सक्षम था परन्तु देश की आजादी के पश्चात् खाद्यान आपूर्ति एक समस्या बनकर सामने आई। विदेशों से अनाज का आयात करना हमारी मजबूरी हो गई। 1960 के दशक में हरित क्रान्ति की आवश्यकता को बल मिला और खाद्यान के लिये विदेशों पर निर्भरता कम होने लगी, किन्तु 40–50 सालों के सकारात्मक परिणामों के उपरान्त अब हरित क्रान्ति के भी कुछ दुष्परिणाम सामने आने लगे हैं। अत्यधिक रसायनों का प्रयोग, हाईब्रिड किस्मों की भरमार, मृदा के स्वास्थ्य में निरन्तर गिरावट, आदानों की बढ़ती कीमतें तथा अत्याधिक भू–जल दोहन आदि के कारण कृषि को पुनः परम्परागत तौर तरीकों से करने की आवश्यकता महसूस होने लगी है।

हमारी भूमि "अन्नपूर्णा" है। फसल की वृद्धि एवं उससे उत्पादन लेने के लिए जो तत्व चाहिए वे सब भूमि और वातावरण में मौजूद हैं। ऊपर से कुछ भी डालने की आवश्यकता नहीं है प्राकृतिक खेती स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों पर आधारित एक रसायन मुक्त कृषि पद्धति है जो स्वदेशी तकनीकों को प्रोत्साहन देती है तथा कृषि को बाहरी आदानों पर निर्भरता से मुक्त करती है। इस खेती में उपयोग किये जाने वाले समस्त संसाधन किसान के खेत या गाँव में ही उपलब्ध रहते हैं अतः बाहर से कुछ भी नहीं खरीदना पड़ता। प्राकृतिक खेती में एक फसल की जगह बहु–फसलों की प्रधानता रहती है तथा ये फसलें एक दूसरे के लिए सहजीवन का कार्य करती हैं।

प्राकृतिक खेती का तात्कालिक प्रभाव मृदा स्वास्थ्य एवं केंचुओं जैसे जीवों पर पड़ता है। केंचुओं की सक्रियता बढ़ने से मृदा में वायु संचार एवं जल धारण क्षमता बढ़ती है। चूंकि प्राकृतिक खेती में किसी भी सिंथेटिक रसायन का उपयोग नहीं होता अतः प्राकृतिक खेती बेहतर स्वास्थ्य को सुनिश्चित करती है।

प्राकृतिक खेती में जीवामृत, पंचगव्य, घनजीवामृत, अमृत पानी, ब्रह्मास्त्र आदि का प्रयोग किया जाता है जिससे मृदा में ह्यूमस का निर्माण होता है तथा जैविक कार्बन बढ़ता है। मृदा में यदि जैविक कार्बन कम हो तो उत्पादन घटने लगता है। हमारे पूर्वजों ने युगों–युगों तक प्राकृतिक खेती की है उसी का परिणाम है कि इतने वर्षों से रासायनिक उर्वरकों का उपयोग करने के बाद भी हम खेतों से अनाज प्राप्त कर रहे हैं।

रासायनिक खेती के कारण ऐसे कितने ही असंख्य पक्षी विलुप्त हो गए जो फसलों को नुकसान पहुंचाने वाले कीड़ों का भक्षण करते थे। खेती में रसायनों के उपयोग से केंचुए सक्रिय नहीं रहते तथा भूमि सख्त होने लगती है जिससे वर्षा का जल भूमि में कम उतरता है। प्राकृतिक खेती में मृदा आच्छादन को महत्व दिया जाता है। मृदा आच्छादन से भूमि में नमी संग्रहित रहती है, जमीन का तापमान बना रहता है तथा ह्यूमस का निर्माण तेजी से होता है जो खेत में नमी एवं वायु संचार से सूक्ष्म वातावरण निर्मित करते हैं।

प्राकृतिक खेती का एक प्रमुख घटक है – मिश्रित खेती। मिश्रित खेती करने से जैव विविधता को बढ़ावा मिलता है। प्राकृतिक खेती फसल पद्धति में यदि एक बीज पत्री फसल जैसे गेहूँ, मक्का, जई, ज्वार, गन्ना, राई आदि की बीजाई करनी हो तो द्वितीय पत्री फसल जैसे मटर, मूंगफली, सोयाबिन, क्विनोआ, कुट्टू आदि को मिश्रित फसल में जरूर लेना चाहिए कारण कि एक बीज पत्री फसल की जड़ में असहजीवी जीवाणु होते हैं और द्विबीज पत्री फसलों में सहजीवी जीवाणु होते हैं और ये दोनों जीवाणु मिलकर हवा से प्रचुर मात्रा में नाइट्रोजन खींचकर पौधों की जड़ों को उपलब्ध करवाते हैं। मुख्य फसल यदि गहरी जड़ वाली हो तो मिश्र फसल उथली जड़ वाली होनी चाहिए। मुख्य फसल यदि ऊँचाई वाली हो तो मिश्र फसल

1. (एम.एस.सी. वनस्पति शास्त्र), राजकीय डूंगर महाविद्यालय,बीकानेर 2. सह प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर

कम ऊँचाई वाली होनी चाहिए। मिश्र फसल का जीवन काल मुख्य फसल से कम होना चाहिए।

प्राकृतिक खेती करने वाले किसानों ने पंचगव्य को बहुत लाभकारी बताया है। इसके उपयोग से जड़ें अधिक विकसित तथा घनी होती है तथा मृदा में गहरी परतों में फैलकर वृद्धि करती है तथा आवश्यक पोषक तत्वों एवं पानी को अधिक मात्रा में अवशोषित करती है। पंचगव्य के उपयोग से पौधों में सूखा सहने की क्षमता एवं रोग प्रतिरोधकता बढ़ती है तथा उत्पादता भी बढ़ती है।

वैसे तो यदि प्राकृतिक खेती का अर्थ समझें तो प्राकृतिक खेती में मानवीय क्रियाएं जुताई, निराई–गुड़ाई, सिंचाई आदि नहीं होती है परन्तु वर्तमान परिदृश्य में उसे रसायन मुक्त खेती और स्थानीय संसाधन आधारित खेती के रूप में लेते हैं। प्राकृतिक खेती को "गौ" केन्द्रित खेती भी कहा जाता है। देशी गाय के गोबर में करोड़ों सूक्ष्म जीव होते हैं जो मृदा को स्वस्थ बनाते हैं। पौधों की वृद्धि के लिए 16 प्रकार के पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। ये सभी पोषक तत्व देशी गाय की आन्त में निर्मित होते हैं तथा गोबर के साथ बाहर आते हैं।

हमारा देश भारत "श्री अन्न" के उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान पर है। श्री अन्न को न्यूनतम संसाधन से उत्पादित किया जा सकता है। मिलेट्स फसलें मौसमी उतार चढ़ाव को भी आसानी से झेल लेती हैं। इनकी खेती कम वर्षा वाले स्थानों पर बिना रसायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के उपयोग से भी की जा सकती है। श्री अन्न फसलों की पकने की अवधि कम होती है तथा इन पर बीमारियों एवं कीट पतंगों का प्रकोप कम होता है। एक वर्ष में श्री अन्न की कई फसलें ले सकते है।

प्राचीन काल में कामधेनु कृषि का प्रचलन था जो गऊ केन्द्रित थी। जिसमें गोबर व गोमूत्र के प्रयोग से मृदा को सजीव रखते थे सही अर्थ में गाय, जमीन और प्रकृति एक दूसरे के पूरक हैं। कामधेनु कृषि करने वाले कृषि को धर्म समझते थे जबकी आज कृषि को व्यापार माना जा रहा है। फसलों की देशी किस्मों से भले ही उत्पादन कम मिलता हो परन्तु वे पौष्टिकता से भरपूर होती हैं। नए–नए हाईब्रिड से उपज तो बढ़ी है परन्तु पौष्टिकता का स्तर कम हो रहा है।

प्राकृतिक खेती में वानस्पतिक बाड़ लगाना, जल प्रबन्धन करना, फसल चक्र अपनाना, अन्तसस्य फसलो द्वारा कीट नियंत्रण, मुख्य फसल के साथ मिश्र फसल लेना, खरपतवार नियंत्रण करना आदि क्रियाऐं शामिल है। हमारे पूर्वजों ने सृष्टि, प्रकृति व चराचर जगत में बढ़िया तालमेल के लिये "नक्षत्र वाटिका" की अवधारणा दी जिसमें वेद शास्त्रों में सुझायें गये नक्षत्रों के अनुसार वृक्षारोपण करने का सुझाव दिया, जैसे – स्वाति नक्षत्र में अर्जुन, रोहिणी नक्षत्र में जामुन तथा पुण्य नक्षत्र में पीपल का पेड़ लगाना चाहिए। छोटी जोत वाले किसान बरगद, आंवला, बिल्वपत्र, पीपल और अशोक के पेड़ लगाकर साथ में सह फसले लेते हैं इसे "पंच वाटिका" कहते हैं। इसी प्रकार सनातन धर्म में नवग्रह वाटिका का विशेष महत्व है। सूर्य की शान्ति के लिये मदार का वृक्ष, चन्द्रमा की शान्ति के लिये पलास, मंगल ग्रह की शान्ति के लिये खैर, बुध ग्रह की शान्ति के लिये लटजीरा, बृहस्पति ग्रह की शान्ति के लिये पीपल, शुक्र ग्रह की शान्ति के लिये गुलर, शनि ग्रह की शान्ति के लिये खेजड़ी राहु ग्रह की शान्ति के लिये दूब तथा केतु की शान्ति के लिये कुश का पौधारोपण करने सलाह दी गई है। हमारे देश में अग्निहोत्र अर्थात सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय देशी गाय के गोबर कन्डे तथा गाय के घी का उपयोग कर यज्ञ किये जाते है जिससे कीट एवं रोग प्रकोप से मुक्ति के साथ–साथ पर्यावरण शुद्ध रहता है। अनाज भण्डारण के लिये अनाज में एक प्रतिशत अग्निहोत्र भस्म मिलाकर भण्डारित करने से कीड़े नहीं लगते हैं।

भावार्थ रूप में प्राकृतिक खेती का उद्देश्य प्रकृति, इन्सान, पेड़–पौधे और जीव–जन्तुओं के बीच स्नेह व अपनत्व को पनपाना है ताकि इंसान के दिल में जीवों और पौधो के प्रति प्रेम और करूणा के बीज प्रस्फुटित हों। मृदा के स्वास्थ्य में सुधार के साथ–साथ बेहतर स्वास्थ्य सुनिश्चित करना तथा किसानों की आय में वृद्धि करना प्राकृतिक खेती के प्रमुख लक्ष्य हैं।

अक्टूबर माह के उद्यानिकी कार्य

डॉ. बलबीर सिंह (वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष)

फल

आम–थांवलों की सफाई करें तथा निम्न तालिका अनुसार खाद व उर्वरक देकर सिंचाई करें।

खाद व उर्वरक	मात्रा प्रति पौधा (किग्रा.)				
	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	चतुर्थ वर्ष	पंचम वर्ष व बाद में
गोबर की खाद	15.00	30.00	45.00	60.00	75.00
सुपर फास्फेट	0.25	0.50	0.75	1.00	1.00
म्येरट आफ पोटाश	–	–	–	0.25	0.50
यूरिया	0.25	0.75	0.75	1.00	1.25

प्रथम से तृतीय वर्ष के पौधों में खाद व उर्वरक जनवरी एवं जून माह में आधी–आधी मात्रा में देवें।

अमरूद–पके फलों को तोड़कर बाजार में भेजे तथा थावलों की निराई–गुड़ाई कर सफाई रखें।

बेर–आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहे तथा निराई–गुड़ाई कर थांवलों को साफ रखें।

अनार– अनार में फल आने लग रहे है अतः सिंचाई का ध्यान रखे तथा थांवलों की सफाई करते रहे।

पपीता–पपीते के नये लगाये बगीचों की देखभाल करें, सिंचाई का ध्यान रहे कि पानी तने के पास नहीं रहे।

अंगूर– अंगूर के बगीचों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा बगीचों की सफाई रखें।

नींबू वर्गीय फल–

बगीचों में सफाई रखें तथा केंकर राग की राकथाम हेतु पौध संरक्षण उपाय में दर्शाई गई दवाई का छिड़काव करें।

टमाटर, बैंगन व मिर्च–तैयार फलों को तोड़कर बाजार में भेजे तथा नियमित देखभाल करते रहें। आवश्यकतानुसार सिंचाई कर निराई–गुड़ाई करें।

फूल गोभी व पत्ता गोभी– पत्ता गोभी की अगेती किस्म **गोल्डन एकर** व **प्राईड ऑफ इण्डिया** की पौध तैयार हो गई हो तो 45 सेन्टीमीटर कतार से कतार की दूरी रख कर रोपाई करें। इसी प्रकार फूल गोभी की पिछेती किस्म पूसा स्नोबल की भी तैयार पौध की 60 सेन्टीमीटर कतार से कतार व 45 सेन्टीमीटर पौधे से पौधे की दूरी पर रोपाई करें। रोपाई से पूर्व खेत में निम्नानुसार खाद/उर्वरक देवें।

(मात्रा किलो प्रति हैक्टर)

	गोबर की खाद	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
पत्ता गोभी	250–300 किलो	150 किलो	80 किलो	75 किलो
फूल गोभी	250–300 किलो	120–125 किलो	80 किलो	60–80 किलो

नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस व पोटाश की पूर्ण मात्रा पौध लगाने से पूर्व भूमि में मिला देवें। नत्रजन की शेष बची हुई आधी मात्रा पौध लगाने के 6 सप्ताह बाद देवें।

कद्दू वर्गीय सब्जियां– फसल की नियमित तेखभाल करें। आवश्यकतानुसार सिंचाई कर निराई–गुड़ाई करते रहें तथा तैयार फलों को बाजार में भेजें।

मटर– गत माह में बोई गई अगेती किस्म **अर्किल** के पौधे बड़े होने लगे होंगे। खेत की निराई–गुड़ाई कर साफ रखें हल्की भूमि में 7–10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहे तथा भारी मिट्टी में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

गाजर व मूली–गत माह बुवाई की गई फसल की देखभाल करें। खेत साफ रखे व सिंचाई करते रहें।

प्याज– प्याज की रबी की फसल हेतु नर्सरी तैयार करने का यह माह उपयुक्त है। इसके लिये निम्न किस्में उपयुक्त है।

लाल– पूसारेड, नासिकरेड, एग्रीफाउन्ड डार्करेड, एग्रीफाउन्ड लाइटरेड, अर्का कल्याण, एन–53

सफेद–उदयपुर–102, पूसा व्हाईट फ्लेट, पूसा व्हाईट राउण्ड

पीली– अर्ली गेनो

प्रति हैक्टेयर 10 किलो बीज पर्याप्त होता है। पौध तैयार करने के लिये बीज को 3X1 मीटर आकार की क्यारियों में 5–7 सेमी. दूरी पर कतारों में बुवाई करें। बोने के बाद बीजों को बारीक खाद व भुरभुरी मिट्टी व घास–फूस से ढ़क देवें तथा उसके बाद झारे से पानी देवें। अंकुरण के उपरान्त घास–फूस हटा देवें एवं निम्न खाद एवं उर्वरक देवें।

गोबर की खाद	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
400–500 क्विं.	100 किलो	50 किलो	100 किलो

नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूर्ण मात्रा बुवाई पूर्व खेत में मिला देवें तथा शेष नत्रजन की आधी मात्रा रोपाई के एक माह बाद खड़ी फसल में देकर सिंचाई करें।

लहसुन–लहसुन की बुवाई इस माह में की जा सकती है।

लहसुन की बुवाई कलिकाओं से की जाती है। 6–8 मिलीलीटर आकार की 5 क्विंटल कलियां प्रति हैक्टर बुवाई हु पर्याप्त होती है। तैरूार भूमि में कतार से कतार 15 सेन्टीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 7–8 सेन्टीमीटर रखते हुए कलिकायें लगायें। प्रति हैक्टर खाद व उर्वरक निम्न प्रकार देवें।

गोबर की खाद	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
200–250 क्विं.	60 किलो	40 किलो	100 किलो

गोबर की खाद खेत तैयारी के समय देवें एवं नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूर्ण मात्रा कलियां लगाने से पूर्व देवें। नत्रजन की आधी 30 किलो मात्रा बुवाई के एक माह बाद देवें।

आलू– आलू की मुख्य फसल की बुवाई इस माह के अन्त तक करें। कोटा क्षेत्र में बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक है। आलू की बुवाई के लिये बीज के चुनाव के समय ध्यान रखे कि बीज रोग रहित व स्वस्थ हो तथा सिकुड़ा हुआ व सूखा हुआ नहीं हो। एक हैक्टेयर की बुवाई के लिये बीज 2.5 सेन्टीमीटर व्यास या 25 से 30 क्विंटल साबुत कन्द की आवश्यकता होती है। बीज को बुवाई से पूर्व टोपसिन एम. के 0.2 प्रतिशत अथवा बाविस्टिन 0.1 प्रतिशत घोल में डुबोकर उपचारित करने के बाद बीजों को ऐजोटोवेक्टर कल्चर से उपचारित कर बुवाई करें।

आलू की उपयुक्त किस्में–

कुफरी सिन्दूरी, कुफरी अंलकार, कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी शीतमान, कुफरी ज्योति, कुफरी बादशाह, कुफरी बहार, कुफरी लालिमा, जे.आर्द.–5857 व जे.एच. 2221

खाद व उर्वरक–

फसल की बुवाई के एक माह पूर्व खेत में 250–300 क्विंटल गोबर की खाद मिट्टी मिला कर देवें बुवाई से पूर्व 60–75 किलो नत्रजन, 80–100 किलो फास्फोरस तथा 80–100 किलो पोटाश देवें। नत्रजन की शेष आधी मात्रा 60–75 किलो बुवाई के 30–35 दिन बाद मिट्टी चढ़ाते समय देवें।

फूल

गत माह रोपाई किये गये पौधों की नियमित देखभाल करें। सिंचाई कर निराई–गुड़ाई करें पुष्प प्रदर्शनियों में भाग लेने हेतु गुलाब, गुलदाऊदी आदि के पौधे गमलों में उगावें। लान नियमित मशीन चलावें तथा खरपतवार उखाड़ कर सिंचाई करते रहे।

लेखक अपने आलेख
dee@raubikaner.org /
rajeshvermasct@gmail.com
पर हिन्दी फोन्ट कृतिदेव 10 में वर्ड फाईल व पीडीएफ दोनों में भिजवाने का श्रम करें।

अक्टूबर माह के कृषि कार्य

डॉ. विजय प्रकाश, निदेशक अनुसंधान
स्वा. के. रा. कृ. वि., बीकानेर

<u>सस्य विज्ञान</u>

सरसों :

भूमि का चुनाव एवं खेत की तैयारी:– सरसों की खेती सिंचित एवं असिंचित दोनो अवस्थाओं में की जाती है। बारानी फसल के लिये खाली छोड़े गये खेतों में जहाँ नमी संरक्षित की गई है में बत्तर आने पर जुताई कर पाटा चलावें इसके बाद बुवाई करें सिंचित फसल के लिये खेत में पलेवा कर खेत तैयार करें। **किस्में :–** वरूणा (टी–59), पूसा बोल्ड, लक्ष्मी, आर.जी.एन.13, आर.जी.एन. 73 **बारानी क्षेत्र के लिए :–** आर.जी.एन.48 आर.जी.एन. – 298 एवं आर.जी.एन. 229 **देरी से बुवाई हेतु :–** आर.जी.एन.145 व आर.जी.एन. 236 **खेत का चुनाव :–**दोमट से चिकनी भूमि अधिक उपयोगी रहती है। **बुवाई :–** 5–20 अक्टूबर का समय सर्वोतम है। **बीज की मात्रा :–**600–700 ग्राम प्रति बीघा, लाईन से लाईन की दूरी 30 सेमी, गहराई 2–2.5 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी विरलीकरण के समय 10–15 सेमी रखें। **बीजोपचार:** बुवाई से पूर्व सफेद रोली रोग से बचाव हेतु एप्रोन 35 एस.डी. नामक फफूंदनाशी दवा से 6 ग्राम/किलो बीज की दर से बीजोपचार करें। **उर्वरक :–** सिंचित फसल के लिये 90 किलोग्राम नत्रजन 30–40 किलोग्राम फास्फोरस एवं 250 किलोग्राम जिप्सम या 40 किलोग्राम सल्फर प्रति हैक्टेयर डालें। बारानी फसल के लिये सिंचित फसल की आधी मात्रा उर्वरक काम में ले। नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय ऊरकर देवें। शेष नत्रजन की आधी मात्रा फसल में सिंचाई के समय डालें।

तारामीरा :

इसकी खेती अधिकांशतः बारानी क्षेत्रों में की जाती हैं जहाँ अन्य फसलों का होना कठिन हो। **बीज की मात्रा :** चार से पॉच किलोग्राम शुद्ध बीज प्रति हैक्टर डालें। कतार से कतार की दूरी 40 से.मी. रखें। बुवाई 15 सितम्बर से 15 अक्टूबर के मध्य करें। **उपयुक्त किस्में:** आई.टी.एस.ए., टी–27।

चना :

भूमि का चुनाव एवं तैयारी : बारानी क्षेत्रों में भूमि में संरक्षित नमी की अवस्था में बत्तर आने पर जुताई करें पाटा चलावें व चने की बुवाई करें। जहां सिंचाई सुविधा है वहाँ पलेवा कर खेत तैयार करें तब बुवाई करें। **बीज की मात्रा व बुवाई :** 60–80 किलोग्राम बीज जो प्रमाणीकृत तथा उपचारित हो, एक हैक्टर के लिये पर्याप्त है। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. रखें। सिंचित क्षेत्र में बीज 5–7 से. मी. तथा बारानी क्षेत्रों में 7–10 से.मी. की गहराई पर डालें। बारानी फसलों की बुवाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक कर देना चाहिये। **उपयुक्त किस्में :** जी.एन.जी.–469 (सम्राट), जी.एन.जी.–663, (वरदान), जी.एन.जी.–1581(गणगौर), जी.एन.जी.–146, आर.एस.जी.–44(उमराव), एच.–208, सी.–235, आर.एस.जी.–888, आर.एस.जी.–945, आर.एस. जी.–807 **काबुली :–** जी.एन.जी. 1292, जी.एन.जी. 1499 (गौरी) एवं जी.एन.जी. 1969 (त्रिवेणी)। **देरी से बुवाई हेतु :–** जी.एन.जी. 1488 (संगम) एवं जी.एन.जी. 2144 **बारानी क्षेत्र के लिए :–** आर.एस.जी. 888। **उर्वरक प्रयोग :** बारानी फसल में 10 किलोग्राम नत्रजन तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस तथा सिंचित फसल में 20 किलो नत्रजन व 32 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टर डालें। उर्वरक 12–15 से. मी. गहरा ऊर कर देवें। **खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग :–**पेन्डीमेथलीन (30 इ.सी.) 625 ग्राम खरपतवारनाशी को 150 लीटर पानी में घोल कर प्रति बीघा की दर से बुवाई के बाद तथा बीज के उगने से पूर्व एक समान छिड़काव करें। प्रथम सिंचाई के बाद कसिये से एक बार गुड़ाई करना लाभदायक रहता है।

अमेरिकन कपास :

सिंचाई :– अंतिम सिंचाई अक्टूबर माह के प्रथम सप्ताह तक करें। यदि सितम्बर माह के अन्त में सिंचाई की जा चुकी हो तो माह अक्टूबर में सिंचाई छोडी जा सकती है।

बाजरा :

कटाई :–समय पर बोया गया बाजरा अक्टूबर माह में कटाई हेतु तैयार हो जाता है। बाजरे के सिट्टे एक या दो बार में तोडने के बाद कडवी काटी जा सकती है।

ग्वार:–

कटाई :–ग्वार की कटाई अक्टूबर माह के अंत में व नवम्बर माह के मध्य तक काटने योग्य हो जाती है। वर्षा के पानी से भीगने या अच्छी तरह से न सूखने पर दाने काले पड जाया करते है। अतः फसल को सूखाने में सावधानी बरतनी चाहिए।

गन्नाः

सिंचाई :–अक्टूबर माह के अंत तक 15 दिनों के अन्तर में सिंचाई करनी चाहिए। **बंधाई :–**अगर सितम्बर में गन्ने की बंधाई न की गई हो तो अक्टूबर मे गन्ने को गिरने से बचाने

के लिए गन्ने की बंधाई करना आवश्यक है।

धान :–

सिंचाई :– धान के खेत में मृदा पूर्णतया संतृप्त रहे इसलिए समय–समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए। कटाई के लगभग 15–20 दिन पूर्व सिंचाई रोक देनी चाहिए।

मूंगफली :–

कटाई :– मूंगफली के पकने का समय अक्टूबर के अंत से नवम्बर के मध्य तक का है। पत्तियां पकने पर हरी बनी रहती है, इसलिए मिट्टी को खोद कर देख ले कि फसल पक गई है या नहीं। खोदने के बाद इन्हें 7–10 दिन तक छोटी–छोटी ढेरियों में रख कर सुखाना चाहिये। पकने में देरी होगी तथा रबी की फसल की बिजाई में देरी हो जाएगी।

कीट विज्ञान:

अमेरिकन कपास : इस माह में अमेरिकन कपास में रस चूसने वाले कीटों का प्रकोप बना रहेगा जिसमें सफेद मक्खी प्रमुख हैं। इस कीट का नुकसान दिखाई देने पर नीमयुक्त दवा व तरल साबुन (5 मिली + 1 मिली) प्रति लीटर पानी या डयाफेन्थुरॉन 50 डब्ल्यु.पी. 1.0 ग्राम या ट्रईजोफॉस 40 ई.सी. 2.50 या थायोमेथोक्जाम 25 डब्ल्यू. जी. 0.50 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। अमेरिकन सूंडी के प्रौढ़ पंतगों को नष्ट करने के लिए एल्ट्रावाइलेट लाइट ट्रेप को सूर्य अस्त होने के दो घण्टे बाद तथा सूर्योदय के दो घण्टे पूर्व जलाना चाहिए। चितकबरी एवं अमेरिकन सूंडी के रासायनिक नियंत्रण हेतु थायोडिकाई 75 डब्ल्यू.पी. 1.75 ग्राम प्रति लीटर या क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 2 मिली प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। **देशी कपास** : देशी कपास में चितकबरी लट के नियंत्रण हेतु इन्डोक्साकार्ब 1 मिली या स्पाइनोसैड 45 एस.सी. 0.33 मिली या फेनवलरेट 20 ई.सी. एक मिली या अल्फामेथ्रिन 10 ई.सी. 0.5 मिली या थायोडिकार्व 75 डब्ल्यू.पी. 1.75 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।

गन्ना : तना छेदक की रोकथाम हेतु फ्यूराडान 3 प्रतिशत दानेदार कण 6 किलो प्रति बीघा की दर से डालें। पायरिला के नियंत्रण हेतु पाइरिला से ग्रसित पत्तियों को पौधे से काट कर इकट्ठा करके जला देना चाहिए। पाईरिला कीट के प्रकोप को सीमित रखने हेतु ऐपिरिकेनिया नामक परजीवी को खेत में पनपने दें या मैलाथियान 50 ई.सी. 300 मिली या डाईमेथोएट 30 ई.सी. या इथियान 50 ई.सी. 250 मिली. प्रति बीघा की दर से छिड़काव करें।

ग्वार : ग्वार की फसल में हरा तेला, सफेद मक्खी तथा काला चेंपा की रोकथाम हेतु डाइमेथोएट 30 ई.सी. 2 मिली प्रति लीटर पानी या थायोमेथोक्जाम 25 डब्ल्यू.जी. 0.50 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

पौध व्याधि :

चना : अक्टूबर माह में बुआई के तुरन्त बाद लगने वाली संभावित व्याधियाँ

(अ) उकठा रोग :– बुआई के 10–15 दिन पश्चात् ही इस रोग के लक्षण दिखाई पड़ जाते है। पौधा ऊपर से मुरझाकर सूखना शुरु हो जाता है। मुरझाये हुये पौधे को उखाड़कर देखने पर जड़े पूरी तरह विकसित परन्तु मुख्य जड़ को चीर कर देखने पर बीच में हल्के भूरे या गुलाबी रंग की धारी दिखाई पड़ती है जहां पर फ्यूजेरियम फफूंद के कोनिडिया इकट्ठा होने से जड़ों द्वारा भूमि से मिलने वाला भोजन पानी लेने वाला संवहन तंत्र अवरुद्ध हो जाता है। फलस्वरुप पौधा मुरझाकर मर जाता है। **रोकथाम** : बुआई से पूर्व कार्बेन्डिाजिम नामक फफूंदनाशी दवा का 1.5–2.0 ग्राम/किलो बीज की दर से बीजोपचार करके बुआई करें। रोगरोधी किस्मों की बुवाई करें –चने की सी –235, जी.एन.जी.–146, जी.एन.जी.–1488, एवं जी.एन.जी. –1969।

(ब) जड़ सड़न रोग :– यह रोग राइजोक्टोनिया नामक फफूंद द्वारा फैलता है। पौधा मुरझाकर मर जाता है। रोगी पौधे को उखाड़ कर देखने पर जड़े काली पड़ी हुई नजर आती है। नियंत्रण हेतु बुआई से पूर्व कार्बेन्डिजिम 1.5–2 ग्राम/किलो से बीजोपचार करावें।

(स) कॉलर रोट :– पौधा अचानक मुरझाकर मरना शुरु हो जाता है फलस्वरुप पौधे की जड़े भूमि की सतह के पास से काली पड़ जाती है। नियंत्रण हेतु बुवाई से पूर्व 2 ग्राम बाविस्टिन प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करके बुवाई करावें। अन्य प्रमुख रोगरोधी किस्में:(1) जी.एन.जी. 663 (वरदान) उकठा रोग प्रतिरोधी किस्म। (2) जी.एन.जी. 469 (सम्राट) मोटे दाने वाली किस्म, इस किस्म में उकठा, जड़गलन, कालररोट, झूलसा रोग की प्रतिरोधी क्षमता पाई गई है।

Printed and published by Dr. P. S. Shekhawat on behalf of Nidesak Prasar Shiksha and Printed at M/s Kishan Enterprises, Magaram Colony, Outside Jassusar Gate, Bikaner and published at Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Bikaner, Editor : Prof. Rajesh Kumar Verma.